भाषागत विविधता
(LINGUISTIC DIVERSITY)

भाषा मनुष्य की अभिव्यक्ति का सबसे शक्तिशाली माध्यम है। प्राकृतिक विभिन्नता के कारण इस देश में प्रायः दस मील में भाषा और बोली में अन्तर आ जाता है। सन् 1991 की जनगणना के अनुसार देश में 1652 भाषायें बोली जाती थीं। वैसे भारतीय संविधान में केवल 15 भाषाओं का ही उल्लेख किया गया है, इसके अतिरिक्त तीन भाषाओं को 1992 में मान्यता दी गयी है। इन 18 भाषाओं का प्रयोग केवल सरकारी कार्य में किया जाता है। वर्तमान में तो 22 भाषाओं को मान्यता मिल चुकी है। इन भाषाओं का उपयोग साहित्य अकादमी द्वारा साहित्यिक सम्मान के लिए भी नहीं किया जाता है। इसके अतिरिक्त भी भारत में अनेक भाषायें व बोलियाँ हैं, जिनका कुछ-न-कुछ साहित्य है, जैसे—हिन्दी में अवधी, बघेली, भोजपुरी, ब्रज, बुन्देली, छत्तीसगढ़ी, हाड़ौती, मगही, मालवी, निमाड़ी, पहाड़ी, राजस्थानी भाषायें और अनेक बोलियाँ सम्मिलित हैं। इस प्रकार हमारे देश व समाज में भाषागत विविधता भी बहुत है। **इरावती कर्वे** के अनुसार भारतीय समाज में तीन भाषायी परिवारों की भाषाएँ बोली जाती हैं—

(अ) **इण्डो-यूरोपीय भाषायी परिवार**—भारत में 78.4 फीसदी लोग आर्य भाषा समूह की बोली बोलते हैं। इसमें पंजाबी, सिन्धी, हिन्दी, बिहारी, बंगला, असमिया, राजस्थानी, गुजराती, मराठी, उड़िया, कश्मीरी इत्यादि भाषाएँ सम्मिलित हैं।

(ब) **द्रविड़ भाषायी परिवार**—भारत में 20.6 फीसदी लोग द्रविड़ भाषा बोलते हैं। इसमें तेलुगु, कन्नड़, तमिल, मलयांलम, कोडगू, गोंडी इत्यादि भाषाएँ आती हैं।

(स) **आस्ट्रो एशियाई भाषायी परिवार**—इसमें मुंडारी, बौन्दो, जुआंग, भूमिया, संथाली, खासी इत्यादि भाषाएँ आती हैं।

इतनी अधिक भाषायी विविधता के कारण भाषाओं का वर्गीकरण भी निश्चित नहीं रह पाता है। मंगोल जाति के लोग तिब्बती-चीनी परिवार की भाषाएँ बोलते हैं। इस भाषा पर आर्य भाषाओं का प्रभाव भी देखने को मिलता है। तमिल, तेलुगु, कन्नड़ और मलयालम द्रविड़ परिवार की मुख्य भाषाएँ हैं जो तमिलनाडु, आन्ध्र प्रदेश, कर्नाटक और केरल में बोली जाती हैं। द्रविड़ भाषाओं के अनेक शब्द और प्रयोग आर्य भाषाओं में आ गये हैं, जबकि संस्कृत के अनेक शब्द द्रविड़ भाषाओं में मिल गये हैं। फिर भी भारत के दक्षिणी राज्यों में उक्त चार भाषाएँ ही प्रचलित हैं। दक्षिण भारत से बाहर भी दो जगहों पर द्रविड़ भाषा बोले जाने का सबूत है। यह इस बात का सबूत है कि द्रविड़ लोग कभी भारत के दूसरे हिस्सों में भी फैले थे। **उदाहरणार्थ**—बलूचिस्तान की ब्रहुई भाषा द्रविड़ समूह की भाषा मानी जाती है, जबकि झारखण्ड के प्रमुख आदिवासी ओरांव जो भाषा बोलते हैं, वह भी द्रविड़ों से मिलती-जुलती है। भाषाशास्त्रियों में इस बात को लेकर भी विवाद है कि ब्रहुई और ओरांव भाषाएँ सच में द्रविड़ परिवार की भाषाएँ हैं या किसी और परिवार की। आदिवासियों के बीच और भी कई बोलियाँ प्रचलित हैं जो वर्गीकरण की दृष्टि से ओष्ट्रिक एवं आग्नेय भाषा समूह में रखी जाती हैं।

सांस्कृतिक विविधता
(CULTURAL DIVERSITY)

भारत जैसे विशाल देश में सांस्कृतिक विविधताओं का होना स्वाभाविक है। इस देश की भौगोलिक पर्यावरण, धार्मिक विश्वास, सांस्कृतिक उन्नति, औद्योगिक प्रगति, जीवन शैली में विविधतायें आदि सभी

Scanned with CamScanner

इसकी सांस्कृतिक विविधताओं की अभिव्यक्ति है। भारत में सांस्कृतिक विविधताएँ—धर्म, वेशभूषा, खानपान, रहन-सहन, संगीत, नृत्य, लोकगीत, विवाह प्रणाली व जीवन संस्कार आदि अनेक क्षेत्रों में दिखाई देती है। महानगरों में पाश्चात्य सभ्यता व संस्कृति का अत्यधिक प्रभाव दिखाई देता है तो ग्रामीण जीवन की भी अपनी ही भारतीय संस्कृति है। अनेक धर्मानुयायी यहाँ विद्यमान हैं। इन सबकी अलग-अलग प्रथाएँ, रुचियाँ व इच्छाएँ हैं। मत-मतान्तरों की विविधता भी उनकी संस्कृति को प्रभावित करती है। कुछ जातियों, समुदायों और सम्प्रदायों के व्यक्तिगत लोकाचार हैं जिनका क्षेत्र की जनसंख्या के तत्त्वों से सावयवी सम्बन्ध रहता है तथा जिसके अनुसार किसी समाज का सांस्कृतिक व्यक्तित्व भी विकसित होता रहता है। **उदाहरणार्थ**—भारत अनेक भूखण्डों में विभाजित है व प्रत्येक भूभाग की अपनी एक विशेषता है। प्रत्येक प्रदेश की अपनी संस्कृति है, जैसे मध्य प्रदेश की नगरीय संस्कृति की विशेषता जनजातियों के क्षेत्र से बिल्कुल भिन्न है, जबकि दोनों एक ही राज्य के निवासी हैं। परन्तु इनके रहन-सहन, खान-पान, वेशभूषा, बोली, व्यवहार, रीति-रिवाज आदि में विविधतायें सरलता से देखी जा सकती हैं। इसी प्रकार सांस्कृतिक विविधता के अन्तर्गत समाज में भिन्नता आने का कारण धार्मिक विश्वासों की विविधतायें, जातीय संरचना व सांस्कृतिक विविधतायें आदि भी होती हैं।

जातिगत के आधार पर विविधता
(DIVERSITY ON THE BASIS OF CASTES)

भारतीय समाज में जाति के आधार पर भी विविधता दिखाई देती है। यद्यपि यह विविधता प्राकृतिक या बाह्य कारणों से नहीं वरन् हिन्दू संस्कृति की ही देन है, परन्तु सामाजिक जीवन के खण्डात्मक विभाजन की दृष्टि से बड़ी महत्त्वपूर्ण है। भले ही जाति व्यवस्था को भारत में मुख्यतः हिन्दू धर्म के साथ जोड़कर देखा जाता है, लेकिन भारतीय उपमहाद्वीप में अन्य कई धर्म जैसे कि मुस्लिम (Muslim) और ईसाई धर्म के कुछ समूहों में भी इस प्रकार की व्यवस्था देखी गयी है। आज बड़े शहरों में तो ये जातिगत बन्धन कुछ ढीले हो गये हैं, परन्तु ग्रामीण क्षेत्रों में ये बन्दिशें आज भी विद्यमान हैं। सामान्य तौर पर जाति के आधार पर प्रमुख विभाजन निम्न प्रकार देखने को मिलते हैं—

- **ब्राह्मण**—'विद्वान समुदाय', जिसमें याजक, विद्वान, विधि विशेषज्ञ, मंत्री और राजनयिक शामिल हैं।
- **क्षत्रिय**—'उच्च और निम्न मान्यवर या सरदार', जिनमें राजा, उच्च पद के लोग, सैनिक और प्रशासक भी शामिल हैं।
- **वैश्य**—'व्यापारी और कारीगर' समुदाय, जिनमें सौदागर, दुकानदार, व्यापारी और खेत के मालिक शामिल हैं।
- **शूद्र**—'सेवक या सेवा प्रदान करने वाली प्रजाति' में अधिकतर गैर-प्रदूषित कार्यों में लगे शारीरिक और कृषक श्रमिक शामिल हैं।

इससे पहले भारत में एक अतिरिक्त जाति को 'अहूत' के रूप में भी जाना जाता था, हालांकि इस प्रणाली को हिन्दू धर्म के कानून के अनुसार अब गैरकानूनी घोषित कर दिया गया है।

आज हम देखते हैं कि यह जातीय भेदभाव देश की राजनीति पर भी हावी होता जा रहा है। आज जातियों के अखिल संघ बने हैं। राजनीतिक दल भी चुनाव के दौरान जातिवाद का उपयोग करते हैं। इस समय उत्तर प्रदेश की राजनीति में जातिवाद के आधार पर ही सत्ता के लिए प्रतियोगिता स्पष्ट देखी जा सकती है। दक्षिण में तमिलनाडु की राजनीति को जातिवाद, साम्प्रदायिकता के रूप में समझा जा सकता

Scanned with CamScanner

जनजातीय विविधता
(TRIBES DIVERSITY)

भारतवर्ष में आज भी अनेक ऐसे मानव समूह निवास करते हैं जो आज भी आधुनिक सभ्यता के प्रभावों से कोसों दूर हैं। इन्हीं को जनजाति अथवा वन्यजाति कहा जाता है। सन् 1991 की जनगणना के अनुसार भारत में 6.78 करोड़ जनजातीय लोग रहते हैं। कुछ जनजातियाँ आदिम अवस्था में ही रहती हैं, जबकि कुछ ने आधुनिक सुख साधनों को अपना लिया है। इन सभी जनजातियों की भाषा अलग है, प्रजा विधि अलग है और संस्कृति भी अलग है। इन सभी जनजातियों में सांस्कृतिक विविधता पाई जाती है। भारतीय संविधान में इनकी संख्या 216 है, परन्तु इसके अतिरिक्त भी बहुत-से ऐसे समुदाय हैं जो जनजातीय जीवन बिता रहे हैं। सम्पूर्ण भारत को जनजातियों की दृष्टि से चार क्षेत्रों में बाँटा जा सकता है—मध्य क्षेत्र में मध्य प्रदेश, बिहार व उड़ीसा तथा पश्चिमी बंगाल की जनजातियाँ (जैसे कि संथाल, मुण्डा, उराँव, हो, भूमीज, कोया, खोण्ड, भूइयाँ, बैगा आदि) आती हैं। उत्तर पूर्वी क्षेत्र में हिमालय की तराई, असम और बंगाल की जनजातियाँ (जैसे कि गद्दी, गुज्जर, किन्नउरा, थारू, कुकी, गारो, खासी, नागा आदि) आती हैं। दक्षिणी क्षेत्र में केरल, मैसूर, मद्रास तथा पूर्वी पश्चिमी घाटों पर रहने वाली जनजातियाँ (जैसे कि गोंड, कोण्डा, डोरा, इरुला, टोडा, पनीयान इत्यादि) आती हैं। पश्चिमी क्षेत्र में राजस्थान, गुजरात और महाराष्ट्र में रहने वाली जनजातियाँ (जैसे कि मीना, भील, गामीत, कोकना आदि) आती हैं। इस प्रकार देश के सभी भागों, जैसे—उड़ीसा, बिहार, गुजरात, राजस्थान, महाराष्ट्र, आन्ध्र प्रदेश और असम आदि में ये जनजातियाँ रहती हैं, जिससे कि मध्य प्रदेश में इन जातियों का प्रतिशत सर्वाधिक है। जनजातियों की कुल जनसंख्या का इन चार क्षेत्रों में प्रतिशत विवरण इस प्रकार है—(i) हिमालय का क्षेत्र (11.35), (ii) मध्य भारत क्षेत्र (56.88), (iii) पश्चिमी भारत क्षेत्र (24.86) तथा (iv) दक्षिणी भारत क्षेत्र (6.21)।

इन जनजातियों के व्यवसाय, खानपान, रहन-सहन, वैवाहिक सम्बन्ध और रीति-रिवाजों में अनेक विविधतायें मिलती हैं। ये लोग अपनी सामाजिक व्यवस्था का निर्वाह करते हुए समूहों में रहते हैं। इस समय भारत की अनेक जनजातियाँ पर-संस्कृतिकरण की प्रक्रिया से गुजर रही हैं और इस कारण अनेक समस्याओं से ग्रस्त भी हैं। अतः जनजातीय संस्कृतियों के अस्तित्व को बनाये रखने हेतु इन्हें विकास के उचित अवसर दिये जाने चाहिए तथा इन्हें भारतीय संस्कृति की मुख्य धारा में आने का अवसर भी दिया जाना चाहिए।

संक्षेप में, यदि देखा जाये तो भारत की **जनजातीय सांस्कृतिक विविधता** निम्न रूपों में देखने को मिलती है—

(1) कुछ जनजातियाँ जनसंख्या की दृष्टि से काफी बड़ी हैं, जैसे—गोंड, मुण्डा, भील तथा संथाल। दूसरी ओर कुछ जनजातियाँ जनसंख्या की दृष्टि से इतनी छोटी हैं कि उनकी गणना सौ व्यक्तियों से अधिक नहीं है, जैसे—ओंग (Onge) तथा टोटो (Toto)।

(2) सामाजिक संगठन की दृष्टि से भी कुछ जनजातियाँ जटिल सामाजिक संगठन रखती हैं तथा कई उपविभागों तथा वर्गों में विभाजित हैं। इसके विपरीत कुछ जनजातियों का सामाजिक संगठन अव्यक्त सरल है।

Scanned with CamScanner

(3) पारिवारिक स्वरूप की दृष्टि से भी जनजातियों में विभिन्नता है। अधिकांश जनजातियाँ पितृसत्तात्मक, पितृस्थानीय एवं पितृवंशीय हैं, परन्तु ऐसी जनजातियाँ भी पायी जाती हैं जो मातृसत्तात्मक, मातृस्थानीय एवं मातृवंशीय हैं, जैसे—कुकी, गारो आदि।

(4) विवाह सम्बन्धी प्रथाओं की दृष्टि से भी जनजातियों में विभिन्नता पायी जाती है। **उदाहरणार्थ**, जौनसर बाबर की खस जनजाति एवं नीलगिरि पहाड़ी की टोडा जनजाति में बहुपत्नी विवाह प्रथा पायी जाती है।

(5) धार्मिक विश्वासों, देवी-देवताओं एवं जादू-टोनों की दृष्टि से भी प्रत्येक जनजाति में भिन्नता है। कुछ जनजातियों में टोटमवाद प्रचलित है तथा अनेक धार्मिक निषेध भी पाये जाते हैं।

(6) आर्थिक विकास की दृष्टि से भी जनजातियों में विविधता पायी जाती है। कुछ जनजातियाँ आज भी वनों में खाद्यान्न संग्रह एवं शिकार पर निर्भर है तो कुछ जनजातियाँ पशुपालन एवं चरागाही हैं। कुछ जनजातियाँ आज भी झूम खेती कर रही हैं तो कुछ ऐसी जनजातियाँ भी हैं जो स्थायी खेती कर रही हैं।

इस प्रकार भारत में व्याप्त जनजातिगत विभिन्नता एक रंग-बिरंगा चित्र प्रस्तुत करती है। सारांशतः बाह्य रूप में भारतीय समाज, संस्कृति और जनजीवन में विविधता के होते हुए भी भारत मौलिक रूप से एक है। इसी सांस्कृतिक, सामाजिक और राजनीतिक चेतना के आधार पर **राधाकृष्णन** का यह कथन उचित ही है—''भारत की संस्कृति में एकता के चिन्ह पाये जाते हैं। यद्यपि परीक्षण करने पर वे विभिन्न प्रकार के रंगों में बिखरे हुए दिखते हैं। यह भिन्नता पूर्ण रूप से समाप्त नहीं हो सकी है यद्यपि सभ्यता के उदय से लेकर अब तक देश के नेताओं के मस्तिष्क में एकता के विचार घूमते रहे हैं।''

Scanned with CamScanner